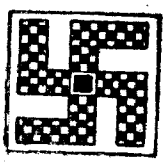

अचलगच्छाधिपति प. पू.

दादाश्री गौतमसागरसूरीश्वरजी महाराज साहब

—श्री भूरचन्द जैन

जैन धर्म सदैव से ही भारत की संस्कृति की रक्षा करने में कटिबद्ध रहा है। इस धर्म की सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, अचौर्य, ब्रह्मचर्य वाणी को जन जन तक पहुंचाने में असंख्य संत महात्माओं, आचार्य देवों, साधु साध्वियों, यति मुनियों का अनुकरणीय योगदान रहा है। इन महापुरुषों ने जैन धर्म के प्रचार प्रसार में भी अनोखी भूमिका निभाई है। इन्होंने अपनी ज्ञानगरिमा से अनेकों महत्वपूर्ण ग्रन्थों की रचनाकर भारत के प्राचीन साहित्य, संस्कृति, पुरातत्व, इतिहास आदि को संजोये रखने का महान कार्य किया है। साहित्य सर्जन, इतिहास की रचना के अतिरिक्त जनजन को धर्म के प्रति आस्तिक बनाने के लिये चरित्र धारण कर जन सेवा करने का प्रयास अपने आप में एक अनोखी देन रही है। अनेकों धार्मिक प्रतिष्ठानों का निर्माण करवा कर उसे धर्मप्रेमियों का केन्द्र बिन्दु बनाने और उसमें त्याग और तपस्या की आराधना कर अपने कल्याण के साथ-साथ जनमानस का कल्याण करने का अनोखा प्रयास सदैव भारतीय इतिहास के अमर पृष्ठों पर अंकित बना रहेगा। जैन धर्म के अचलगच्छ को पुनर्जीवित रखने में अचलगच्छ मुनिमंडलाग्रेसर दादाश्री गौतमसागरसूरिजी महाराज साहब की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। अनेकों अधर्मी लोगों ने दादाश्री को धर्म मार्ग से पथ भ्रष्ट करने के साथ आपके साधु साध्वी समुदाय की एकता को भंग करने का अशोभनीय प्रयत्न किया। लेकिन दादाश्री की दूरदर्शिता, दृढ़ विचार कठोर परिश्रम, धर्म के प्रति कटु आस्था, संगठन शक्ति का प्रभुत्व को देखकर इन्हें एवं इनके शिष्य साधु साध्वी समुदाय को तोड़ने का सबका प्रयास एवं प्रयत्न निफल्ल ही रहा। दादाश्री के ही कारण जैन धर्म का अचलगच्छ आज भी जैनधर्म के प्रचार प्रसार के साथ-साथ भारतीय धार्मिक, साहित्य, संस्कृति, इतिहास, पुरातत्व क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान देने में सक्षम बना हुआ है।

दादाश्री गौतमसागरसूरिजी महाराज साहब का जन्म शूरवीरों, सतियों, संतों की भूमि राजस्थान के पाली नगर में वि. सं. १९२० में श्रीमाली ब्राह्मण श्री धीरमल के यहां क्षेमलदेवी की कोख से हुआ। ब्राह्मण धार्मिक संस्कारों को परिपूर्ण कर श्री धीरमल ने बालक का नाम गुलाबमल रखा। जैसा नाम वैसा ही आपका रंग रूप था। जिस प्रकार गुलाब महक देता है उसी प्रकार बालक गुलाबमल की तोतली वाणी से अमृत बरसता था। शरीर की बनावट एवं रूप सौन्दर्य को देखकर सभी, बालक गुलाबमल को प्यार से चूम लेते थे। बाल किलकारियों एवं पारिवारिक स्नेह के बीच गुलाबमल का बचपन बीत रहा था। पाँच वर्ष की उम्र होगी कि पाली-मारवाड़

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भीषण अकाल की चपेट में आगया। जनजीवन अस्तव्यस्त हो गया और पशु मृत्युज्यां को प्राप्त होने लगे। चारों ओर पीने के पानी की किल्लत ने जनमानस को अत्यन्त ही पीड़ित कर दिया और अन्नाभाव से भूख से तड़पने की नौबत उत्पन्न हो गई। इन संकट से अकाल पीड़ितों को सहायता एवं सहयोग देने के लिए कई समाजसेवी संस्थाओं एवं दानवीरों ने अनुकरणीय योगदान किया। इन्हीं दिनों गुजरात क्षेत्र के कई धर्मप्रेमी एवं धर्म प्रचारक भी इस संकट में जन सहयोग देने पाली की अकाल पीड़ित जनता के बीच जनसेवी बनकर आये। अंचलगच्छके यतिवर्य श्री देवसागर भी पाली पधारे। यति देवसागर एवं श्रीमाली ब्राह्मण श्री धीरमल के बीच पारस्परिक मैत्री सम्बन्ध बन गया।

पाली मारवाड़ के अकाल का अन्त हो गया लेकिन श्रीमाली ब्राह्मण श्री धीरमल एवं यति देवसागर के बीच मैत्री का सम्बन्ध और अधिक गहरा बन गया। एक दिन यति श्री देवसागर एवं श्रीमाली श्री धीरमल बात-चीत में तन्मय थे कि बालक गुलाबमल बालक्रीड़ाओं को करता हुआ अचानक यतिजी की गोद में आकर बैठ गया और यति वेश को धारण करने की जिद्द करने लगा। बालक के ओजस्वी स्वरूप एवं शारीरिक लक्षणों को देखकर यति श्री देवसागर ने कहा कि यह बालक भविष्य में महान् धार्मिक व्यक्ति बनेगा इसमें संगठन की अनूठी शक्ति होगी, जिस धर्म का यह प्रचार प्रसार करेगा उसकी कीर्ति भविष्य में नया मोड़ लेगी और जनमानस का कल्याण करने में यह सदैव मार्गदर्शक बने रहेंगे। अनेकों संकटों, तिरस्कारों, विपदाएं इन पर अवश्य ही आवेंगी लेकिन यह अपने मार्ग पर दृढ़ रहेगा। दो मित्रों की आपसी चर्चा और बालक की बाल अठखेलियां चल रही थी। यति श्री देवसागर ने बालक को देने का प्रस्ताव श्रीमाली ब्राह्मण श्री धीरमल के समक्ष रखा। गुलाबमल के माता-पिता ने सहर्ष यतिजी के प्रस्ताव को स्वीकार किया और पांचवर्षीय बालक को यति श्री देवसागरजी को वि. सं. १९२५ में सौंप दिया।

मां बाप का लाड़ला पुत्र गुलाबमल अब यति श्री देवसागर के साथ धार्मिक वातावरण में पलने लगा। यति जी ने इनकी जिज्ञासाओं, स्मरणशक्ति, ज्ञानगरिमा को देखकर इनका नाम ज्ञानचन्द रखा। बालक गुलाबमल अब ज्ञानचन्द के नाम से परिचायक बन गया। विद्या में तल्लीन एवं धर्म प्रचार में व्यस्त रहने वाले बालक को देखकर यति स्वरूपसागर ने चाहा कि यह बालक यदि जैन साधु बन जावे तो यह जैन जगत की अनूठी सेवा कर सकेगा। यति स्वरूपसागर की इच्छानुसार बालक ज्ञानचन्द को यति श्री देवसागर ने इन्हें सौंप दिया। अब ज्ञानचन्द धार्मिक क्षेत्र की गहराई में अधिक खो गया। यद्यपि इन्हें जैन साधुत्व की दीक्षा नहीं दी थी परन्तु यति जीवन के रूप में रहकर इन्होंने कई जैन व्रतों को धारण कर लिया था। अनेकों धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन कर लिया। कई विद्याओं में यह दक्ष बन चुका था। बचपन यौवन में परिवर्तित हो गया और युवा ज्ञानचन्द विशेष दूने उत्साह से जैन धर्म के प्रचार प्रसार में व्यस्त रहने लगा।

जहां कहीं भी धर्म चर्चा होती युवक ज्ञानचन्द ओजस्वी वाणी, दृढ़ आस्था, सुदृढ़ विचारों से जैन धर्म की महिमा को जन-जन में पहुँचाने में प्रयत्नशील रहने लगे। इनकी वाणी की मधुरता, ज्ञानगरिमा, स्पष्ट विचारों को सुनकर जनमानस इनके व्यक्तित्व की तरफ और अधिक आकर्षित होने लगा। अन्त में स्वयं ज्ञानचन्द ने ही पूर्णरूप से जैन यति की दीक्षा ग्रहण करने का सुदृढ़ निश्चय कर लिया। वि. सं. १९४० की वैशाख सुदी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्यारस को आपने आचार्य श्री विवेकसागरसूरीश्वरजी महाराज से बम्बई के माहीम (गांव) में जैन यति की विधिवत दीक्षा को अंगीकार कर लिया।

पाली के श्रीमाली ब्राह्मण श्री धीरमल का पुत्र गुलाबमल यति जीवन का ज्ञानचन्द एवं जैन जगत का पूर्णरूप से यति गौतमसागर नाम से परिचायक बन गया। यतियों के सत्संग में रहने के कारण आपने यति जीवन को स्वीकार करने में पहल की। यति जीवन अंगीकार कर आप स्वेच्छा से धर्म प्रचार करने में तल्लीन रहने लगे। आपके ओजस्वी विचारों, स्पष्ट वक्तव्यों को सुनकर यति समुदाय के अन्य यतियों में खलबली मच गई। आपका कथन था कि अंधविश्वासों एवं दिखावे से मुक्ति नहीं मिलती। मुक्ति का मार्ग तो त्याग और तपस्या ही है। उस समय यति दीक्षा में होते हुए आपने वि. सं. १९४१ में कच्छ के देवपुर, १९४२ में मुंदरा, १९४३ में गोधरा, १९४४-४५ में शेरडी स्थानों पर चातुर्मास सम्पन्न किये। इन चातुर्मासों में आपके धार्मिक प्रवचनों, जैन संगठन के सुदृढ़ विचारों से जनमानस आपकी ओर अधिक आकर्षित होने लगा। वि. सं. १९४६ में आपकी जन्म एवं कर्म भूमि पाली में स्थित नवलखा श्री पार्श्वनाथ मन्दिर के प्रांगण में आपको मुनि जीवन की विधिवत् शुद्ध दीक्षा देने का आयोजन किया गया। आपने वि. सं, १९४६ में बीदड़ा, १९४७ में पारु, १९४८ में कोडाम में चातुर्मास सम्पन्न किये। वि. सं. १९४९ में आपका चातुर्मास भुज में हुआ। संगठन शक्ति के प्रणेता के रूप में आपका कार्य आरम्भ हुआ और आपने सर्वप्रथम मुनि उत्तमसागर, मुनि गुणसागर, साध्वी शिवश्री, उत्तमश्री, एवं लक्ष्मीश्री को अपना शिष्य-शिष्या बनाया।

वि. सं. १९४९ से वि. सं. २००८ तक आपने करीबन ८० से अधिक बालिकाओं एवं महिलाओं को जैन साध्वी के रूप में दीक्षित किया। आप द्वारा दीक्षित की गई साध्वियों में प्रमुख वि. सं. १९४९ में शिवश्री, उत्तमश्री, लक्ष्मीश्री, १९५१ में कनकश्री, रतनश्री, निधानश्री, १९५२ में चन्दनश्री, जतनश्री, लब्धिश्री, लवण्यश्री, १९५५ में गुलाबश्री, कुशलश्री, ज्ञानश्री, १९५६ में हेतुश्री, १९५९ में सुमतीश्री, १९६० में तिलकश्री, जड़ावश्री, पद्मश्री, विनयश्री, लाभश्री, अतिश्री, जमनाश्री, कस्तूरश्री, १९६२ में विवेकश्री, १९६४ में बल्लभश्री, मगनश्री, शिवकुंवरश्री, हर्षश्री, १९६७ में मणीश्री, देवश्री, पदमश्री, आनन्दश्री, जड़ावश्री, नेमश्री, १९६८ में दानश्री, १९७० में धनश्री, १९७१ में कपूरश्री, रूपश्री, मुक्तिश्री, प्रदीपश्री, केशरश्री, न्यायश्री, १९७४ में सौभाग्यश्री, अमृतश्री, मेनाश्री, ऋषिश्री, १९७६ में मंगलश्री, १९८१ में शीतलश्री, भक्तिश्री, दर्शनश्री, केवलश्री, मुक्तिश्री, हरखश्री, १९८४ में दीक्षितश्री, चतुरश्री, लक्ष्मीश्री, १९८५ में अशोकश्री, १९८७ में विद्याश्री, रमणीकश्री, इन्द्रश्री, १९९१ में सोभाग्यश्री, १९९३ में जयंतश्री १९९४ में मनोहरश्री, धीरश्री, १९९९ में लब्धिश्री, रतनश्री, कीर्तिप्रभाश्री, प्रधानश्री, जगतश्री, हीरश्री, २००१ में उत्तमश्री, २००२ में धर्मश्री, २००५ में विद्युतश्री, वृद्धिश्री, २००६ में रवीभद्राश्री, निरंजनाश्री, अमरेन्द्रश्री एवं २००८ में गुणोदयश्री, हीरप्रभाश्री आदि थीं। जिन साध्वियों को आपने अपनी आज्ञा में लिया उनमें वि. सं. १९६९ में दयाश्री, १९७१ में विमलश्री, २००६ में गिरिवरश्री, सुरेन्द्रश्री एवं २००८ में पुष्पाश्री थीं। इनके अतिरिक्त कई बालिकाओं एवं महिलाओं ने दीक्षा स्वीकार कीं एवं इनकी शिष्याएं बनी।

साध्वी दीक्षाओं के अतिरिक्त मुनि महाराज श्री गौतमसागरजी महाराज साहब ने करीबन चौदह व्यक्तियों को जैन साधु के रूप में दीक्षित किया और करीबन चार अन्य साधुओं को अपने समुदाय में लेना स्वीकार किया। आप द्वारा दीक्षित साधुओं में वि. सं. १९४९ में उत्तमसागर, गुणसागर, १९५२ में प्रमोदसागर, १९६५ में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नीतिसागर, १९६६ में दानसागर, मोहनसागर, उम्मेदसागर, १९६५ में धर्मसागर, १९७१ में सुमतिसागर, १९८२ में क्षांतसागर, २००३ में विवेकसागर, २००४ में अमरेन्द्रसागर, २००५ में भद्रंकरसागर, २००६ में प्रेमसागर थे। जिन साधुओं ने आपकी आज्ञा स्वीकार की उनमें वि. सं. १९५८ में मुनिदयासागर, १९६६ में रविसागर, कपूरसागर, भक्तिसागर थे। आपके कई साधु शिष्यों से कई व्यक्तियों ने जैन साधुत्व स्वीकार कर दीक्षा ली।

जैन समाज का विधिपक्ष (अचलगच्छ) जिसमें साधु साध्वियां नगण्य सी थीं आपने इस क्षेत्र में अनुकरणीय कार्य कर इस गच्छ को पुनर्जीवित करने में महान् योगदान दिया। आपके साधु-शिष्य समाज ने अनेकों साधु साध्वीयों को भी आपकी मौजूदगी में दीक्षित करने का सफलीभूत प्रयास किया। वर्तमान अचलगच्छाधिपति कच्छकेशरी, आचार्य श्री गुणसागरसूरीश्वरजी महाराज साहब भी आपके आज्ञाकारी शिष्य श्री नीतिसागरजी महाराज के शिष्य बने।

वि. सं. १९४९ में पक्की दीक्षा लेने के पश्चात् श्री गौतमसागरजी महाराज साहब अपने अनेकों साधु साध्वियों सहित जामनगर में १७, भुज एवं सुथरी में सात-सात, गोधरा में ६, पालीतणा एवं नालीया में चार-चार बम्बई, मोटी खावड़ी, मांडवी में तीन-तीन, मांडल में दो एवं देवपुर, सांयरा, तेरा, वराडीया, आसंबीआ, मुंदरा में क्रमशः एक-एक चातुर्मास कर आपने जैन धर्म के सिद्धान्तों के व्यापक प्रचार करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। चातुर्मासों के दौरान अनेकों साधु साध्वियों को दीक्षा देने के साथ-साथ जनसाधारण को अनेकों नियमों का प्रतिबोध देते रहे। आपकी मधुरवाणी, सत्य भाषण, प्रखरबुद्धि, तेजस्वी विचारधारा के कारण जहां कहीं पर भी आपका प्रवचन होता जनमानस की भीड़ उमड़ पड़ती थी। जैन संगठन शक्ति के तो आप प्राण ही थे। जहां कहीं पर भी आपका विचरण हुआ जैन समाज ने अनेकों रचनात्मक एवं धार्मिक कार्य करवाने का सौभाग्य प्राप्त किया।

महान तेजस्वी, गुणों की खान, ज्ञान के धनी, संगठन शक्ति के देवता रूप में आपकी यश कीर्ति चारों ओर फैलने लगी। उस समय अंधविश्वास एवं विलासिता में डूबे धर्म प्रचारकों ने आपके साधु साध्वी संगठन को तोड़ने की जीतोड़ कोशिश की। कुछ साधु साध्वियां आपके संगठन से अवश्य ही अलग रही लेकिन उन्हें अपनी मंजिल नहीं मिली। अंधविश्वास, रूढ़ियों, कुरीतियों एवं विलासिता में खोये धर्म प्रचारकों को भी आप समय पर लताड़ देने में नहीं चूकते थे। आपने सदैव सादा जीवन और उच्च विचार रखने पर बल दिया। त्याग और तपस्या पर हमेशा आपका जोर रहा। जिसके कारण ही आपकी ओर जनमानस का झुकाव रहा।

धर्म प्रचार के साथ विधिपक्ष (अचलगच्छ) को मजबूत बनाने के साथ-साथ आपने अपनी देख रेख एवं प्रेरणा से अनेकों धार्मिक प्रतिष्ठानों, मन्दिरों आदि का नव निर्माण, जीर्णोद्धार, प्रतिष्ठा आदि करवाई। वि. सं. १९५२ में नारायणपुर, १९५८ में नवागाम, १९६२ में बंढी, १९७८ में देवपुर, १९८४ में पडाणा, १९९२ में मोडपुर, १९९७ में नलीया, १९९८ में लायजा, २००७ में रायण एवं २००८ में गोधरा में मन्दिरों का निर्माण, प्रतिष्ठा, स्वर्ण महोत्सव, जीर्णोद्धार आदि करवा कर आपने भारतीय पुरातत्व एवं इतिहास की नई कड़ी को जोड़ने का प्रयास किया। आपश्री के उपदेशों से मांडवी, तेरा, जामनगर, गढशीशा, अंजार, मोटा आसंबीआ, सुथरी, जखौय बंदर, शाहेरा, जशापुर, वराडीया, लाला, बारापधर, शाधांण, दोण, कोटड़ी, हालापुर, देढीया, कोटड़ा,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मेराऊ, तलवाणा, मोटी खावड़ी, दलतुंगी, दाता आदि स्थानों पर बने जैन देरासरों में युगप्रधान दादा साहब आचार्य श्री कल्याणसागरसूरीश्वरजी महाराज साहब की प्रतिमाओं को प्रतिष्ठित करवाया।

मुनि महाराज श्रीगौतमसागरजी महाराज की धार्मिक गतिविधियों एवं विधिपक्ष (अचलगच्छ) एकता के कारण आपको **'अचलगच्छाधिपति'** से जनसाधारण सम्बोधित किया करते थे। मन्दिरों की प्रतिष्ठा, जीर्णोद्धार, नव निर्माण करवाने वाले मुनिवर्य श्री गौतमसागरजी महाराज साहब को चतुर्विध संघ ने आचार्य पद देने का अतिआग्रह किया लेकिन आपश्री ने उसे स्वीकार नहीं किया। वि. सं. २००८ के माघ महीने में रामाणिआ (कच्छ) जिनालय के स्वर्ण अवसर पर जय-जयकार के नारों में असंख्य जनसमुदाय ने एक स्वर से आपश्री के प्रति गहरी श्रद्धा भरी आस्था प्रकट करते हुए आचार्य गौतमसागरसूरीश्वरजी महाराज, अचलगच्छाधिपात आचार्यश्री गौतमसागरसूरीश्वरजी महाराज साहब, दादा श्री गौतमसागरसूरीश्वरजी महाराज आदि जयघोष के नारे लगाकर उद्घोषणा की।

आपकी त्याग और तपस्या वास्तव में ही अनूठी थी। कई बार अठाई का तप और वर्षीतप कर आपने आत्मकल्याण करने का मार्ग अपनाया। आपकी प्रेरणा से साहित्य एवं पुरातत्व सर्जन के लिये जामनगर, भुज, मांडवी आदि स्थानों पर हस्तलिखित एवं छपे ग्रन्थों का बड़ा संग्रहालय स्थापित हुआ। जामनगर में आपकी प्रेरणा से श्री आर्यरक्षितपुस्तकोद्धार संस्था की स्थापना भी हुई जिसके माध्यम से अनेकों पुस्तकों का प्रकाशन किया गया।

त्यागी और तपस्वी राजस्थानरत्न दादाश्री गौतमसागरसूरिजी महाराज साहब ने भारत के अनेकों तीर्थों की सद्भावना यात्रा कर लाभ उठाया। साथ ही साथ इन तीर्थों के उत्थान में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। गुजरात सौराष्ट्र के पालीतणा, शंखेश्वर पार्श्वनाथ, तालध्वजगिरी, कच्छपंचतीर्थी, भद्रेसर, घृतकलोल पार्श्वनाथ, भोयाणी, तारंगाजी, गिरनार आदि तीर्थों की कई बार यात्रा करने का सौभाग्य प्राप्त किया। राजस्थान की वीर भूमि में आपश्री ने वि. सं. १९५७ एवं १९६५ में पधार कर आबू, नांदिया, लोटाणा, बामनवारी, सिरोही, कोरटा, राणकपुर, मुंछाला महावीर, नाडोल, नाडलाई, वरकाना, केसरियाजी, उदयपुर, देलवाड़ा आदि अनेकों जैन तीर्थों की यात्रा की।

तीर्थोद्धारक, धर्मप्रचारक, मानवकल्याणकारी, त्यागी एवं तपस्वी, संगठन शक्ति के प्रणेता, विचारों के दृढ़, अचलगच्छाधिपति, कच्छ हालार देशोद्धारक, राजस्थान के पुरुषरत्न, ज्ञानपुंज दादाश्री गौतमसागरसूरीश्वरजी महाराज का वि. सं. २००९ वैशाख सुदी तेरस की पिछली रात को कच्छ भुज में देवलोक हो गया। आज यद्यपि दादाश्री गौतमसागरसूरीश्वरजी महाराज साहब हमारे बीच नहीं हैं लेकिन आप द्वारा जैन जगत में अचलगच्छ (विधिपक्ष) को जो ज्ञान प्रदान किया वह आज भी अचलगच्छाधिपति, आचार्य श्री गुणसागरसूरीश्वरजी महाराज साहब की आज्ञा में विचरण करता हुआ सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, अचौर्य के प्रचार के साथ-साथ त्याग एवं तपस्या में तल्लीन हैं। दादाश्री गौतससागरसूरीश्वरजी महाराज साहब द्वारा अचलगच्छ साधु साध्वी के पौधे को पनपाने में आचार्य श्री गुणसागरसूरीश्वरजी महाराज साहब अधिक परिश्रमी बने हुए हैं। इस समय आपकी आज्ञा में करीबन १६ साधु एवं १२५ साध्वियां विचरण कर "अहिंसा परमो धर्म" का देश के कौने-कौने में प्रचार प्रसार करने में कटिबद्ध हैं। □□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org